



Original Article

हिंदी आत्मकथा साहित्य में दलित विमर्श (मुर्दहिया के विशेष संदर्भ में)

प्रा. मंदाकिनी वर्णेकर

हिंदी विभाग प्रमुख

सौ. मंगलताई रामचंद्र जगताप महाविद्यालय महाविद्यालय उन्नज

Manuscript ID:

IJAAR-C130338

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume – 13

Issue – 3

January – February 2026

Pp. 190 – 193

Submitted: 28 Jan. 2026

Revised: 05 Feb. 2026

Accepted: 10 Feb. 2026

Published: 28 Feb. 2026

Corresponding Author:

प्रा. मंदाकिनी वर्णेकर

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.22785965

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.22785965>



Creative Commons



प्रस्तावना:

साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है। समाज में व्याप्त विषमता और शोषण को उजागर करने में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। समकालीन हिंदी साहित्य में अनेक विमर्शों को लेकर साहित्य लिखा जा रहा है। इनमें स्त्री विमर्श, आदिवासी विमर्श, दलित विमर्श और किन्नर विमर्श विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। इन विमर्शों का उद्देश्य समाज को अपनी समस्याओं से परिचित कराना तथा समाज के हाशिये पर पड़े वर्गों को मुख्यधारा से जोड़ना है। भारतीय संस्कृति में चातुर्वर्ण व्यवस्था को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त रहा है। भारतीय समाज व्यवस्था जाति और धर्म पर आधारित रही है। उच्च-नीच की भावना भारतीय समाज पर लगा हुआ एक धब्बा है। समाज में ब्राह्मणों को सबसे ऊँचा स्थान तथा दलितों को निम्न स्थान दिया गया। उच्च वर्गीय लोग निम्न वर्गीय लोगों का शोषण करते हुए दिखाई देते हैं।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

How to cite this article:

प्रा. मंदाकिनी वर्णेकर. (2026). हिंदी आत्मकथा साहित्य में दलित विमर्श (मुर्दहिया के विशेष संदर्भ में). *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(3), 190 – 193. <https://doi.org/10.5281/zenodo.22785965>

दलित शब्द की अवधारणा के संबंध में विद्वानों में मतभेद पाए जाते हैं। इस शब्द पर अनेक विद्वानों ने विचार किया है। दलित का अर्थ है — जिसका दलन, शोषण या उत्पीड़न किया गया हो। दलित शब्द से तात्पर्य उस वर्ग से है, जिसके धन, संपत्ति, अधिकार और श्रम का हरण किसी

सत्तासंपन्न वर्ग या जाति द्वारा किया जाता है। दलित शब्द की कई परिभाषाएँ मिलती हैं। इसका अर्थ केवल बौद्ध या पिछड़ी जाति नहीं है, बल्कि समाज में जो भी पीड़ित है वह दलित है। दलित वह है जो मानवीय अधिकारों से वंचित है, जिसे सामाजिक रूप से नकारा गया है। उपेक्षित, अपमानित,



प्रताड़ित, बाधित और पीड़ित व्यक्ति भी दलित की श्रेणी में आते हैं। डॉ. बाबासाहेब अंबेडकर ने दलितों को परिभाषित करते हुए कहा है कि दलित जातियाँ वे हैं जिन्हें समाज में निम्न समझा गया। इनमें निम्न श्रेणी के कारीगर, धोबी, मोची, भंगी तथा सेवक जातियाँ जैसे चमार आदि सम्मिलित हैं। कुछ समय पूर्व तक उनकी स्थिति अर्धदास या बंधुआ मजदूरों जैसी रही है। इस प्रकार दलित की परिभाषा स्पष्ट होती है। दलित साहित्य दलित समाज के सामूहिक मन का दर्पण है। यह उसके जीवन, संघर्ष और अनुभवों का साहित्य है। दलित साहित्य के मूल में निषेध और विद्रोह की भावना निहित है। जब दलित अपनी गरीबी, दशा और समाज में होने वाले अपमान की कथा कहता है, तो वह केवल उसकी व्यक्तिगत गाथा नहीं होती, बल्कि संपूर्ण दलित समाज की पीड़ा की अभिव्यक्ति होती है। दलित साहित्य सवर्ण मानसिकता और दलित-विरोधी गतिविधियों के प्रतिरोध का साहित्य है। यह सदियों से पीड़ित दलितों की वेदना का साहित्य है।

हिंदी दलित आत्मकथा हिंदी साहित्य में कहानी, उपन्यास, कविता आदि विधाओं में दलित विमर्श लिखा गया है। दलित आत्मकथाओं के क्षेत्र में ओमप्रकाश वाल्मीकि, डॉ. टी. आर. जाटव, सूरजपाल चौहान, नैमिषराय, माता प्रसाद आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय साहित्य के शास्त्रीय अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी में आत्मकथा लेखन की न तो समृद्ध परंपरा रही है और न ही मजबूत वर्तमान। साहित्य में आत्मकथा एक ऐसी विधा है जिसमें जीवन-वास्तव का चित्रण प्रमुख होता है।

आत्मकथा शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है — आत्मा + कथा = आत्मकथा। ‘आत्मा’ का अर्थ है- स्वयं, अपना या निज और ‘कथा’ का अर्थ है कहानी या वर्णन। अर्थात् स्वयं के जीवन की कहानी को आत्मकथा कहा जाता

है। आत्मकथा के संबंध में महात्मा गांधी ने कहा है “आत्मकथा अपने जीवन के सत्य के प्रयोग का लेखा-जोखा है।” रवींद्रनाथ ठाकुर के अनुसार — “आत्मकथा जीवन विकास की वह कथा है, जिसे व्यक्ति स्वयं अभिव्यक्त करता है।” पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार — “आत्मकथा अपने जीवन की घटनाओं का आत्म-विश्लेषणात्मक वर्णन है।” इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि आत्मकथा केवल जीवन-वृत्तांत नहीं होती, बल्कि आत्मनिरीक्षण और अनुभवों का यथार्थ लेखन होती है।

मुर्दहिया में दलित विमर्श:

‘मुर्दहिया’ आत्मकथा के लेखक तुलसीराम हैं। तुलसीराम का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के एक साधारण दलित परिवार में हुआ। उनका बचपन अत्यधिक गरीबी, सामाजिक उपेक्षा और जातिगत भेदभाव के वातावरण में बीता। प्रारंभिक शिक्षा के बाद उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा प्राप्त की और बाद में प्राध्यापक के रूप में कार्य किया।

तुलसीराम हिंदी दलित आत्मकथा साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर माने जाते हैं। उनकी आत्मकथा के दो भाग प्रकाशित हुए हैं — ‘मुर्दहिया’ और ‘मणिकर्णिका’।

‘मुर्दहिया’ तुलसीराम की आत्मकथा का पहला भाग है। ‘मुर्दहिया’ उस स्थान को कहा जाता है जहाँ मृत पशुओं को फेंक दिया जाता है। इस आत्मकथा में लेखक के बचपन और किशोरावस्था के संघर्षपूर्ण जीवन का मार्मिक चित्रण किया गया है। इसमें जातिगत भेदभाव, सामाजिक विषमता, आर्थिक निर्धनता तथा शिक्षा प्राप्त करते समय आने वाली कठिनाइयों का यथार्थ चित्रण मिलता है। आत्मकथा की विषयवस्तु दलित समाज के जीवन-संघर्ष और सामाजिक वास्तविकताओं पर



आधारित है। लेखक के बचपन के अनुभवों से स्पष्ट होता है कि उस समय समाज में दलितों की स्थिति अत्यंत दयनीय थी। गाँव की सामाजिक व्यवस्था जाति पर आधारित थी। दलितों को हीन और निम्न माना जाता था। मंदिर, भोजनालय तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों पर उनके साथ भेदभाव किया जाता था। दलितों को समाज में सम्मानजनक स्थान नहीं दिया जाता था। उन्हें केवल निम्न कार्यों के लिए ही उपयुक्त समझा जाता था, जैसे मरे हुए पशुओं को उठाना, गंदगी साफ करना आदि। यही उनके जीविकोपार्जन का साधन था। ‘मर्दहिया’ शब्द दलित जीवन की विडंबना को व्यक्त करता है।

शिक्षा : सामाजिक मुक्ति का साधन:

तुलसीराम ने अपने अनुभवों के माध्यम से बताया है कि दलित बच्चों के लिए शिक्षा प्राप्त करना कितना कठिन था। स्कूल में शिक्षकों का व्यवहार उपेक्षापूर्ण होता था। उन्हें सवर्ण छात्रों से अलग बैठाया जाता था और छोटी-छोटी बातों पर अपमानित किया जाता था। कक्षा में दलित छात्रों को सबसे पीछे बैठना पड़ता था। बैठने की व्यवस्था भी जातिगत आधार पर निर्धारित होती थी। दलित छात्रों का स्पर्श सवर्ण छात्रों से न हो, इसका विशेष ध्यान रखा जाता था। पानी पीने की व्यवस्था भी अलग होती थी। वे स्वयं घड़े से पानी नहीं ले सकते थे; शिक्षक ऊपर से उन्हें पानी पिलाते थे। इस प्रकार की अपमानजनक परिस्थितियों के बावजूद लेखक शिक्षा प्राप्त करते रहे। लेखक लिखते हैं — “अपमान सहते हुए भी विद्यालय जाना मेरे जीवन की अनिवार्यता बन गया था।”

आत्मसम्मान की भावना:

बचपन से सामाजिक अपमान और जातिगत भेदभाव का सामना करने के कारण लेखक के मन में हीनता की भावना

उत्पन्न हो गई थी। सवर्ण लोग दलितों को सम्मानजनक दृष्टि से नहीं देखते थे, जिससे उनके आत्मविश्वास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता था। परंतु शिक्षा प्राप्त करते-करते उनके भीतर आत्मसम्मान की भावना विकसित होने लगी। उन्हें यह अनुभव हुआ कि शिक्षा के माध्यम से सामाजिक बंधनों को तोड़ा जा सकता है और सम्मानजनक जीवन प्राप्त किया जा सकता है। सामाजिक अपमान की घटनाएँ उन्हें संघर्ष करने की प्रेरणा देती हैं। इस संदर्भ में लेखक स्पष्ट करते हैं कि शिक्षा ही मनुष्य को सम्मानजनक जीवन प्रदान कर सकती है।

जातिगत शोषण:

दलित समाज के पारंपरिक व्यवसाय समाज में निम्न माने जाते थे, परंतु इन्हें करने के लिए दलितों को बाध्य किया जाता था। यह व्यवस्था केवल आजीविका का साधन ही नहीं थी, बल्कि सामाजिक अपमान का कारण भी थी। लेखक लिखते हैं — “मरे हुए पशुओं को उठाना हमारा काम माना जाता था।”

आर्थिक निर्धनता:

लेखक के बचपन की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय थी। घर में कई बार भोजन तक उपलब्ध नहीं होता था और कई बार उपवास की स्थिति बन जाती थी। जीवन-यापन के लिए आवश्यक मूलभूत सुविधाओं का अभाव था। इस प्रकार की आर्थिक विषमता ने लेखक के जीवन को अत्यंत संघर्षपूर्ण बना दिया।

छुआछूत की समस्या:

आत्मकथा में छुआछूत की समस्या का भी सशक्त चित्रण मिलता है। समाज में दलितों को अछूत माना जाता था



और उनका स्पर्श अपवित्र समझा जाता था। उन्हें मंदिर में प्रवेश की अनुमति नहीं थी। सवर्णों के साथ उठना-बैठना और भोजन करना वर्जित था। लेखक लिखते हैं कि उनके छूने मात्र से पानी अपवित्र माना जाता था। विद्यालय में भी उन्हें अन्य बच्चों से अलग बैठाया जाता था। इससे शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त जातिगत भेदभाव स्पष्ट रूप से सामने आता है।

निष्कर्ष:

संक्षेप में 'मुर्दहिया' आत्मकथा में तुलसीराम ने अपने जीवन के अनुभवों के माध्यम से भारतीय समाज व्यवस्था में दलितों की वास्तविक स्थिति का सजीव चित्रण किया है। यह केवल एक व्यक्ति की आत्मकथा नहीं है, बल्कि पूरे दलित समाज के संघर्ष और पीड़ा की कहानी है। दलित समाज को सामाजिक और शैक्षणिक स्तर पर अनेक कठिनाइयों का

सामना करना पड़ता है। लेखक ने प्रतिकूल परिस्थितियों में शिक्षा प्राप्त करके अपने जीवन को नई दिशा दी। वास्तव में यदि दलित समाज को सामाजिक बंधनों से मुक्ति प्राप्त करनी है, तो उसका प्रमुख मार्ग शिक्षा ही है। शिक्षा के माध्यम से मानवीय मूल्यों की स्थापना संभव है। 'मुर्दहिया' आत्मकथा भारतीय समाज की सामाजिक संरचना का यथार्थ दस्तावेज है। यह दलित चेतना को जागृत करने के साथ-साथ सामाजिक समानता और मानवीय मूल्यों की स्थापना का संदेश देती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. दलित साहित्य और उसकी सीमाएँ- डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर
2. 'मुर्दहिया'-तुलसीराम